IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 1, Issue 1 (Jan -Feb. 2011) 12-17
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

कृष्णा सोबती की भाषा शैली

ताहिरा बानों
व्याख्याता उर्दू
राजकीय मीरा कन्या महाविधालय उदयपुर *(राजस्थान)*

परिचय
कृष्णा सोबती (१८ फ़रवरी १९२५- २५ जनवरी २०१९) (सम्बद्ध भाग अब पाकिस्तान में) मुख्यतः हिन्दी की आख्यायिका (फिक्शन) लेखिका थी । उन्हें १९८० में साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा १९९६ में साहित्य अकादमी अध्येतावृत्ति से सम्मानित किया गया था। अपनी बेलाग कथात्मक अभिव्यक्ति और सौष्ठवपूर्ण रचनात्मकता के लिए जानी जाती हैं। उन्होंने हिंदी की कथा भाषा को विलक्षण ताज़गी़ दी है। उनके भाषा संस्कार के घनत्व, जीवन्त प्रांजलता और संप्रेषण ने हमारे समय के कई पेचीदा सत्य उजागर किये हैं। कृष्णा सोबती की भाषा शैली सहज, सरल, और व्यवहारिक है वे प्राय: प्रसंगानुकूल और पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करती है। प्रस्तुत संस्मरण 'मियाँनसीरुद्दीन'में उन्होंने उर्दू मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है।

जीवन परिचय
कृष्णा सोबती का जन्म गुजरात में 18 फरवरी 1925 को हुआ था। भारत के विभाजन के बाद गुजरात का वह हिस्सा पाकिस्तान में चला गया है। विभाजन के बाद वे दिल्ली में आकर बस गयीं और तब से यहीं रहकर साहित्यसेवा कर - रही हैं। उन्हें1980 में 'ज़िन्दगीनामा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला था। 1996 में उन्हें साहित्य अकादमी का फेलो बनाया गया जो अकादमी का सर्वोच्च सम्मान है। हिंदी साहित्य की महान साहित्यकारा और लेखिका के रूप में जानी जाने वाली कृष्णा सोबती का जन्म गुजरात और पंजाब के उस हिस्से में हुआ था जो अब पाकिस्तान में है। सोबती को प्रसिद्धि उनके उपन्यास मित्रो मरजानी ने दिलाई थी। यह एक ऐसा उपन्यास था जिसमें उन्होंने एक विवाहित महिला की कामुकता का एक नायाब चित्रण किया था। इन्होंने हशमत नाम से भी लेखन का कार्य किया हुआ है और हशमत नाम से उसको प्रकाशित भी करवाया, जो कि लेखकों और दोस्तों की कलम के चित्रों का संकलन है।

इनकी कहानियाँ 'बादलों के घेरे' नामक संग्रह में संकलित हैं। इन कहानियों के अतिरिक्त इन्होंने आख्यायिका की एक विशिष्ट शैली के रूप में विशेष प्रकार की लंबी कहानियों का सृजन किया है जो औपन्यासिक प्रभाव (फिक्शन) उत्पन्न करती हैं। ऐ लड़की, डार से बिछुड़ी, यारों के यार, तिन पहाड़ जैसी कथाकृतियाँ अपने इस विशिष्ट आकार प्रकार के कारण उपन्यास के रूप में प्रकाशित भी हैं। अपनी बेलाग कथात्मक अभिव्यक्ति और सौष्ठवपूर्ण रचनात्मकता के लिए जानी जाती हैं। उन्होंने हिंदी की कथा भाषा को विलक्षण ताज़गी़ दी है। उनके भाषा संस्कार के घनत्व, जीवन्त प्रांजलता और संप्रेषण ने हमारे समय के कई पेचीदा सत्य उजागर किये हैं। कृष्णा सोबती हिंदी में लिखते समय कई बार पंजाबी और उर्दू के मुहावरों का उपयोग किया करतीं थीं। समय के साथ इन्होंने राजस्थानी मुहावरों को भी अपने लेखन में शामिल कर लिया। उर्दू, पंजाबी और हिंदी संस्कृतियों की परस्पर क्रिया ने इनकी रचनाओं में प्रयुक्त भाषा को अत्यधिक प्रभावित करने के साथ वह नयापन भी प्रदान किया जो उस समय सामान्यता देखने को नहीं मिलता था। उनकी कहानियों के पात्र दबंग, साहसी और चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए तैयार रहने वाले होते थे। सोबती की रचनाएं मुख्य रूप से स्त्री की पहचान और उसकी सेक्सुअलिटी जैसे मुद्दों से जुड़ी होती थीं, जिसके कारण वे कई बार विवादों में भी रही।

प्रकाशित कृतियाँ
कहानी संग्रह-
- बादलों के घेरे -1980

लम्बी कहानी -(उपन्यासिका/आख्यायिका)
1. डार से बिछुड़ी -1958
2. मित्रो मरजानी -1967
3. यारों के यार -1968
4. तिन पहाड़ -1968
5. ऐ लड़की -1991
6. जैनी मेहरबान सिंह -2007 (चलचित्रीय पटकथा-; 'मित्रो मरजानी' की रचना के बाद ही रचित, परन्तु चार दशक बाद 2007 में प्रकाशित)

उपन्यास-

1. सूरजमुखी अँधेरे के -1972
2. ज़िन्दगी़नामा -1979
3. दिलोदानिश -1993
4. समय सरगम -2000

विचार-संवाद-संस्मरण-

1. हम हशमत (तीन भागों में)
2. सोबती एक सोहबत
3. शब्दों के आलोक में
4. सोबती वैद संवाद

यात्रा-आख्यान-

- बुद्ध का कमण्डल : लद्दाख़

कृष्णा सोबती की अन्य रचनाएं

1. कृष्णा सोबती का डार से बिछुड़ी (घर के दरवाजे से अलग), 1958 में प्रकाशित किया गया ऐसा उपन्यास था, जिसकी कहानी पूर्व-विभाजन भारत पर आधारित थी।
2. इन्होंने 1966 में मित्रो मरजानी नामक एक उपन्यास लिखा, जो ग्रामीण पंजाब के ऊपर आधारित था। इसमें एक युवा विवाहित महिला द्वारा अपनी कामुकता का अन्वेषण और उसकी पुष्टि करते हुए दिखाया गया है। इसका कई भाषाओं में अनुवाद हुआ।
3. 68 में दो उपन्यास और प्रकाशित हुए यारों के यार व टिन पहर।
4. इसके अलावा 1972 में कृष्णा सोबती का उपन्यास सूरजमुखी अंधेरे के प्रकाशित हुआ इसके बाद उन्होंने लड़की, गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान तक और दिल-ओ-दानिश जैसे उपन्यास लिखें।

सम्मान एवं पुरस्कार

साहित्य अकादमी की महत्तर सदस्यता समेत कई राष्ट्रीय पुरस्कारों और अलंकरणों से शोभित कृष्णा सोबती ने पाठक को निज के प्रति सचेत और समाज के प्रति चैतन्य किया है। कृष्णा सोबती को 1980 में जिंदगीनामा के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

1. 1981 में शिरोमणि पुरस्कार के अतिरिक्त मैथिली शरण गुप्त सम्मान से सम्मानित किया गया।
2. 1982 में कृष्णा सोबती को हिंदी अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया।
3. 1996 में कृष्णा सोबती को साहित्य अकादमी फेलोशिप से पुरस्कृत किया गया।
4. 1999 में, लाइफटाइम लिटरेरी अचीवमेंट अवार्ड के साथ कृष्णा सोबती प्रथम महिला बनीं जिन्हें कथा चूड़ामणि अवार्ड से नवाजा गया।
5. 2008 में हिंदी अकादमी दिल्ली का शलाका अवार्ड भी उनको मिला।

सोबती की कहानियां

सोबती अपने कथा साहित्य में जिस साहसिकता का प्रतीक मानी जाती हैं वह उनके व्यक्तित्व को एक शाश्वत ऊँचाई देता है कथा साहित्य या लेखन में स्त्री विमर्श के लांच होने के पहले वे अपने आख्यानों में तेज तर्रार नायिकाओं की जननी बन चुकी थीं नैतिकता के कागज़ी प्रतिमानों को ध्वस्त करते हुए *मित्रो मरजानी* लिखा तो *ऐ लड़की* उनके विद्रोही तेवर की एक और मिसाल बन कर सामने आई सोबती ने शुरुआती दौर में कहानियां लिखीं जो उनके संग्रह *बादलों के घेरे* में संकलित हैं हालांकि यह संग्रह सन 1980 में सामने आया वे पात्रों को अपने बीच से उठाने में सिद्ध हस्त है इन कहानियों में उन्होंने दादी अम्मा का चरित्र सँजोया है *बहनें* में बहनों का किरदार जैसे वे अपनी लेखनी से जीवंत बना देती हैं।

सोबती विभाजन व आजादी के संघर्ष के दौर से गुजरी कथाकार हैं सो विभाजन की कचोट को उनहोंने अपनी कहानियों और खास तौर पर अपने आखिरी उपन्यास *गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान* में भरपूर जिया है उनकी कहानियों में आए चरित्र दादी अम्मा, कामदार भीखमलाल, मां, लामा, व बादलों के घेरे कहानी की बुआ देर तक अपनी विशिष्टताओं से गूँजते रहते हैं *डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा* --- छोटी किन्तु हारर पैदा करनेवाली कहानी है जैसे विभाजन की मारकाट के शब्द हमारे कानों में डिकोड हो रहे हों वे विभाजन के दौरान लारियों से भर भर कर ले जाई जाने वाली सवारियों का जैसे जीवंत चित्रण करती हैं वह काबिलेगौर है जरा सी कहानी और इतने बारीक डिटेल्स कि आंखें भर आएं. कहानी के अंश देखें,

''एक निर्जीव युवक, पथरायी आंखें, सूखे बाल और नीले अधर, ड्राइवर ने हमदर्दी के गीले स्वर में उस बेजान शरीर को झकझोर कर कहा, 'उठो भाई, अपना वतन आ गया...'.वतन! ओठ फड़फड़ाए----दो सोयी सोयी भरी हुई बाहें उठीं, ओठ फड़फड़ाए, ''डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा...''

आवाज मौत की खामोशी में खो गयी. पथरायी हुई आंखों की पलकें जड़ हो गयीं---वतन की यात्रा खत्म हो गयी.''

इस कहानी के बीच बीच में उभरती आवाज 'डरो मत मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा' जिस तरह का दबाव मस्तिष्क पर डालता है वह विभाजन के दौरान मची मार काट के दृश्य को उपस्थित कर देता है।

इसी संग्रह में उनकी एक कहानी *सिक्का बदल गया* है. विभाजन की त्रासदी का ऐसा हिला देने वाला वृत्तांत की रुह हिल उठे शाह जी के जाने के बाद शाहनी अकेली हो गयी हैं-- बूढी असहाय पर गांव वालों से न चाहते हुए भी उसे जुदा होना पड़ रहा है उसके जाने की बात से सारा गांव रो उठा है पर वह अब और यहां रुक नहीं सकती पर जाएगी कहां शाह जी के जाने के बाद वैसे ही वह अकेली हो गयी थी अब न जाने कहां दाना पानी लिखा हो उसे जाना होगा क्योंकि राज पलट गया है, सिक्का बदल गया है उसके जाने की खबर से शेरे का दिल टूट गया है, इसमाइल उससे कुछ आशीषें मांगता है. स्मृति का एक बड़ा कालखंड छोड़ कर शाहनी चल पडी है, चल पड़ा है ट्रक किसी अजानी राह पर आंखें बरस रही हैं, दाऊद खां विचलित हो कर देख रहा है उसे जाते हुए कुछ पता नहीं ट्रक चल रहा है कि वह स्वयं चल रही है. छोटी छोटी कहानियों में एक औपन्यासिक असर पैदा कर देने वाली कृष्णा सोबती ने जो रचा है वह कहानी या उपन्यास भर नही है, वह महज आख्यान नही है; वह बदलते हुए युग की दास्तान है वह बदलते हुए चरित्रों की दास्तान है।

एक अन्य कहानी *मेरी माँ कहाँ* भी विभाजन को शिद्दत से महसूस करने वाली कहानी है युनुस गाड़ी चला रहा है सड़कों पर मारकाट मची है मुसलमानों को काफिर कहा जा रहा है उसे भी अचानक उसे सड़क पर एक घायल बच्ची दिखती है अभी जान है उसे अपनी बहन नूरन याद आती है जिसे छोड कर बेवा माँ चल बसी थी वह उसे उठा लेता है और अस्पताल ले जाता है तमाम कश्मकश से गुजरते हुए वह उसका इलाज कराता है बच्ची ठीक हो रही है पर उसका चेहरा देखते हुए उसे भय लगता है कहीं वह मार न डाले काफिर जो है होश आते ही वह कहती है मुझे कैंप में छोड दो वह कहता है मेरे घर चलो वह पूछती है *मेरी मां कहाँ है,* मेरे भाई कहां, मेरी बहन कहाँ? मार्मिक कहानी है यह यों तो उनकी और भी कहानियां बहुत अच्छी हैं मनोविश्लेषण में लाजवाब कुछ पारिवारिक मिजाज की कहानियां भी हैं जैसे बहनें और दादी अम्मा कहानी अपने में पारिवारिकता की एक अजीब सी सुगंध से रची बसी हैं।

जीवन और चिंतन

कृष्णा सोबती के लेखन में यह जो धार है, यह जो लीक से हट कर पात्रों स्थितियों मानवीय परिस्थतियों को रचने की शक्ति है वह कहां से आती है अपने उपन्यासों के जरिए जिस तरह के स्त्री पात्र उन्होंने प्रस्तुत किए हैं वे साठ के दौर में एक संस्कारी किस्म के समाज में मिलने मुश्किल होते हैं पर रचनाकार वही है जो ढँके मुँदे समाज के ढँके मुँदे यथार्थ को रच कर दिखाए वे जिस दौर की कथाकार हैं तब ऐसे कथाकार कम थे जिनके यहां यौनिकता पर चर्चा या अपनी इच्छाओं का सहज इज़हार स्वीकार्य था एक आरोपित उच्चादर्श भरे जीवन की कामना कथाकारों से भी की जाती थी समाज की बुराइयों को ढाँक कर चलने की मध्यवर्गीय आदतों का शिकार कथाकार भी हुआ करता था कृष्णा सोबती ने इस रूढ़ि को आगे बढ़ कर तोड़ा वे संयुक्त परिवार में पली बढ़ीं विभाजन का दर्द देखा मारकाट देखी पाकिस्तानी मुसलमानों और हिंदुस्तानी मुसलमानों के मिजाज के बारीक से बारीक अंतर को महसूसा अपनी कहानियों में मुस्लिम पात्र को रचते हुए कहीं से भी यह बताने की चेष्टा नहीं की कि मुसलमान अनिवार्य तौर पर बुरे होते हैं दंगे के बीच हो रही मार काट से बचाने वाले पात्र उनके यहां मुसलमान भी हैं शाहनी को अपने बीच न बचा पाने की टीस दाउद के मन में है एक बच्ची को सड़क पर घायल व कराहता हुआ देख कर जिस शख्स का दिल पिघल जाता है वह और कोई नहीं ड्राइवर यूनुस है एक मुस्लिम पात्र कितने अपनापे से वह उस बच्ची का उपचार कराता है और अपने घर ले जाता है वह भले उसे देख कर डर जाती है क्योंकि उसे वैसे ही दृश्य और निर्मम चेहरे ही देखे हैं पर यूनुस ऐसा नहीं है यह भरोसा भी सोबती ही दिलाती हैं मित्रो की *सेक्सुअल डिजायर* और सोच में *बोल्डनेस* को लेकर काफी चर्चा हुई है वे कहती हैं, ये दुनिया बहुत बड़ी है, इसमे कई तरह के आवरण हैं आज जो लडकियां शिक्षित हैं, पढ रही हैं, उन्हें इस बात का अहसास है हमारे समाज में इन बातों को लेकर नैतिकता का जो कोड है वो बहुत सख्त रहा है और संभवत: जहां सख्ती ज्यादा होती है वहां वर्जनाओं की सांकल तोड़ने की कोशिशें ज्यादा होती हैं वे एक सवाल के उत्तर में कहती हैं, **''मित्रो सिर्फ एक किताब नहीं रही, समय के साथ साथ वह एक व्यक्तित्व में बदल गयी है.''**

वे कहती हैं, **''मित्रो मरजानी की मित्रो जब अपनी छातियां खोल कर अपने आपको देखती है तो उसकी निगाह में स्त्री और पुरुष दोनो की निगाह शामिल होती है''** उनके शब्दों में,

''मित्रो व्यक्ति की जिस छटपटाहट का प्रतीक है वह यौन उफान ही नहीं, व्यक्ति की अस्मिता का भी अक्स है जिसे नारी की पारिवारिक महिमा में भुला दिया जाता है.''

कृष्णा सोबती के लेखन से गुजरते हुए यह नहीं लगता कि कोई चीज वे भाषा के आवरण में छुपा रही हैं. उनके पास हर घटना हर परिस्थिति को कहने के लिए समर्थ भाषा है. वे जीवन की उत्सवता की रचनाकार हैं जहां एक उन्मुक्त वातावरण में चीजें घटित होती हैं. मित्रो भले औरों की निगाह में बोल्ड या आउटस्पोकेन हो, पर वह है इसी जीवन-जगत की प्राणी. और हर प्राणी अपना जीवन अपनी तरह जीता है उनके जीवन और रहन सहन में भव्यता तो थी पर मध्यवर्गीयता की रुढियों से मुक्त न था। लिहाजा ऐसे समाज में जो जीवन उनहोंने देखा, महसूस किया, जिन लोगों, चरित्रों के साथ वे रहीं, उन्हें भीतर से महसूस किया और फिर जो रचा, वह निरुद्विग्न रह कर तभी मित्रो जैसी स्त्री ने आकार लिया वे अपनी रचनाओं को अपने चिंतन से जोड़ कर देखती हैं कहती हैं वे, मेरे रचनात्मक पक्ष से मेरा रिश्ता मेरी चिंतन दृष्टि से बनता है एक संपन्न परिवार में पली ननिहाल और ददिहाल दोनों घरानों की संस्कृतियों को जीने वाली कृष्णा सोबती किताबों के बीच बड़ी हुई पर नफासत इतनी कि खाने की मेज पर बैठकर किताब पढने की मनाही थी क्योंकि उससे किताबों के गंदे होने की आशंका रहती है।

सोबती अपनी भाषा से पहचानी जाती हैं, जैसे निर्मल वर्मा, अज्ञेय, जैनेन्द्र, *ज़िन्दगीनामा* में पूरी तरह पंजाबियत है जैसे *मैला आँचल* में भाषाई आंचलिकता की खुशबू दोनों अपने देशज मुहावरे, भाषिक विपुलता और बेबाक चरित्रों के कारण दूर से ही पहचाने जाते हैं। आप सोबती के संस्मरणों की भाषा पढें लेखकों कवियों के मिजाज और उनकी शख्सियत पर उनके वृत्तांत पढ़ें तो लगेगा अपने मित्र लेखक लेखिकाओं का पूरा चित्र खींच देने में वे माहिर हैं जैसा लेखक वैसा ही उनके गद्य का मिजाज एक-एक पल के बोल बरताव का दृश्य उकेर देनेमें कुशल कृष्णाजी के *हम हशमत* के संस्मरण ऐसे किसी भी लेखक के लिए मिसाल हैं जो उसकी परिधि में शामिल हैं।

सौभाग्य है कि अशोक वाजपेयी व निर्मल वर्मा यहां दो बार आए हैं दोनों बार कृष्णा जी ने उन पर डूब कर लिखा है वे शब्द चयन को लेकर भी काफी सतर्कता बरतने वाली लेखिका रही हैं. न होतीं तो *ज़िन्दगीनामा* के शीर्षक के प्रति उनमें इतना मोह न होता कि वे इसके लिए अमृता प्रीतम से एक लंबी कानूनी लड़ाई लड़तीं।

अपना रचनात्मक एकांत

कृष्णा सोबती की हर अदा में नफासत नज़र आती है वे सभा में हों, बोल रही हों, बात कर रही हों, उनका अंदाज बिल्कुल जुदा होता बल्कि कई बार उनके व्यक्तित्व के सख्त रेशों से यह पहचानना मुश्किल होता कि इस बात पर पता नहीं उनका क्या रिएक्शन हो उनकी शख्सियत में एक खास तरह की रहस्यात्मकता रही है किसी से खुलना तो तह तक अंदर, न खुलना तो नारियल के छिल्के की तरह सख्त तोड़ना मुश्किल उनकी खामोशियों को गो कि खामोशियां उन्हें बहुत अच्छी लगतीं वे एक जगह कृष्ण बलदेव वैद से बतियाते हुए कहती हैं, '' पेड़ों की ऊँचाइयों में से छनता मौन अपने एकान्तिक कोलाहल में हवाओं को छूता हुआ आपको घेर लेता है सम्पूर्ण हारमनी आप यहां कुछ और हो उठते हैं (सोबती-वैद संवाद, पृ22)

लेखक का अपना एकांत वह होता है जहां उसकी लिखने पढने की गृहस्थी होती है. वह और उसकी तनहाई जहां एक का भी अंत हो जाए ऐसा एकांत नितांत एकल इकाई लिखने की मेज इस बारे में बहुधा लोगों ने उनसे सवाल किए हैं पर जैसा कि कुंवर नारायण अपनी डायरी में लिखते हैं, लिखना मेरा शौक है, बीमारी नहीं केवल 10-15 कृतियाँ देकर वे गए पर सारी की सारी क्लासिक अभिव्यक्ति के चरम शिखरों को छुआ उन्होंने कृष्णा सोबती का भी यही हाल रहा लगभग डेढ़ दर्जन कृतियां दो-एक इधर उधर इसी में पूरा जीवन समेट दिया उन्होंने वे कहती हैं, **''मात्र लिखने के लिए लिखना--यह मेरे निकट कभी घटित नहीं हुआ लिखित में दोहराने से बहुत कतराती हूँ.'' लेखक अपने ठीहे पर बैठता नहीं समाधिस्थ-सा होता है अपनी रचना प्रक्रिया समझाते हुए वे कहती हैं,''**

अक्सर रात को ही काम करती हूँ यह सोचकर सुख होता है कि इस पर्यावरण को मैंने हर पल अपने में महसूस किया है पन्नों पर पाठ में घुलने दिया है रात अपनी मेज के आसपास बहती निपट खामोशियां कुछ ऐसी जैसे टीन की छत पर हल्की हल्की बूँदाबांदी हो रही हो.'' लेखन को वे अपने आपसे संवाद मानती हैं।

अपने लिखने के समय के बारे में अन्यत्र वे बताती हैं कि 'मैं रात में लिखती हूँ---रात का अंधकार जब मेरे अकेले टेबल लैंप के रहस्य में आ सिमटता है तो शब्द मुझे नए राग, नई लय और नई धुन में आ मिलते हैं.' (लेखक का जनतंत्र, आशुतोष भारद्वाज से बातचीत, पृ199) वे स्वीकार करती हैं कि लेखक सिर्फ निज की लड़ाई नहीं लड़ता न अपने दुख दर्द और हर्ष विषाद का ही लेखा जोखा पेश करता है अपने अंदर बाहर को रचनात्मक सेतु से जोड़ता है उसे लगातार उगना होता है--हर मौसम, हर दौर में ''(सोबती वैद संवाद, पृ30)

लिखना क्या हमेशा एक-सा होता है, शायद नहीं इसलिए कि जीवन में भी सारे काम एक से नहीं होते बड़े लेखक की कोई रचना उम्दा हो सकती है कोई हल्की भी यह मन मिजाज मौसम और अनुभूति की गहराई पर निर्भर करता है अनुभव के बीज बहुत अच्छे हों पर संवेदना की जमीन में वैसी नमी न हो तो शायद रचना की पैदावार बहुत अच्छी नही होगी इस बात को वे स्वीकारती हैं कहती हैं,

''लेखन में सूखे के अंतराल तो आते ही रहते हैं सभी रचनाएं एक जैसी ऊर्जा में से नहीं फूटतीं. कई बार ऐसा भी होता है कि

बड़े बड़े लेखक अचानक चुक जाते हैं, दो तीन अच्छी रचनाएं देने के बाद यह अंदेशा हर लेखक के सर या कलम पर मँडराता रहता है."(वही, पृ164) सोबती लिखने के लिए सनलिट् ब्रांड का कागज और सिग्नेचर पेन पसंद किया करती थीं *चन्ना* और *डार से बिछुड़ी* सनलिट ब्रांड कागज पर ही लिखे गये।

भाषा का अनुभव बनते जीवनानुभव

वे बातचीत में अक्सर कुछ ऐसी बातें कह जाती हैं जो सार्वभौम और एक्सकलूसिव होती हैं वैद व अन्य लेखकों के साथ संवाद में बीच बीच में आए हुए ऐसे अनेक वाक्य/विचार हमें सम्मोहित करते हैं, यथा: लेखक सिर्फ निज की लड़ाई नहीं लड़ता, अपने अंदर बाहर को रचनात्मक सेतु से जोड़ता है, अच्छी रचना जिन्दगी की टकराहटों और संघर्ष में से होकर उभरती है, शिल्प और कथ्य कृति की बुनतर में ताने-बाने की तरह गुँथे रहते है, सादी सरल भाषा सिर्फ पठनीयता का ही नुस्खा नहीं, वह भाषा का परिष्कार भी है, सेक़्स हमारे जीवन का, साहित्य का महाभाव है, व्यक्ति का आात्मिक एकांत परिवार के कोलाहल में गायब हो जाता है, संयुक़्त परिवार की संस्कारी मर्यादा व्यक्ति की निजता से बहुत कुछ छीन लेती है, लेखक का अपना नाम और अपने लेखन की मर्यादा स्वयं बनानी होती है, बाजार प्रकाशक की अतृप्त आत्मा को अपनी ओर खींचता है, कापीराइट के रक्षक और भक्षक दोनों एक ही वजूद में पलते हैं, परंपरा के नाम पर सिर्फ भव्य प्राचीन को टेरना निरर्थक है भाषा सोबती की वह विशिष्ट इकाई है जहां वे अपने होने को अलग ढंग से रेखांकित करती हैं हिंदी की रचना परंपरा में यह चीज सबसे जयादा मायने रखती है कि उसके पास अपने अनुभवों को रचना में बदलने के लिए भाषा कैसी है कविता में जैसे विनोद कुमार शुक्ल का अपना अंदाजेबयां है, किसी और का वैसा नहीं, जगूड़ी का अपना स्थापत्य है वैसा किसी और का नहीं अज्ञेय अपनी भाषा शैली में बहुत निथरे नजर आते हैं ।

निर्मल वर्मा अपने गद्य की स्निग्धता के लिए ही याद किए जाते हैं. वैसे ही कृष्णा सोबती न केवल अपनी कहानियों, उपन्यासों की अनूठी किस्सागोई के लिए याद की जाती हैं, अपने साहसिक तथा त्यक्तलज्जासुखी भवेत् वालेभाव से जीने सोचने वाले पात्रों के लिए याद की जाती हैं बल्कि अपनी खास तरह की भाषिक अदायगी के लिए भी हालांकि वे तत्कालीन पाकिस्तान के गुजरात में जन्मी, विभाजन के हालात का साक्षात्कार किया, फिर भी जितना उनका पंजाबी व पंजाबियत पर दबदबा रहा है उतना ही हिंदी पर भी एक साफ सुथरेपन की कलफ उनकी भाषा पर हमेशा दीखती रही जैसे अज्ञेय पंजाबी होते हुए भी कुशीनगर में जनमे पिता के साथ देश के अनेक स्थलों पर आते जाते रहे, सेना में भी रहे पर उनकी भाषा देखिए तो वहां तत्सम का भी दबदबा है तद्भव का भी देशज व बोलियों के साथ भी उनका गहरा अपनापा रहा है न होता तो उनकी भाषा भी आकाशवाणी के समाचारों सी रुखी और निर्विकार होती कृष्णा सोबती के साथ भी ऐसा ही है।

जिन्दगीनामा में छायी पंजाबी व पंजाबियत के लिए उन्हें एकाधिक आलोचनाएं भी सुननी पड़ीं जैसा कि रेणु को *मैला आंचल* की खास इलाकाई भाषा के लिए किन्तु यही इन उपन्यासों की विशेषता भी रही है कि वे आसानी से अन्य उपन्यासों के ढेर में से अलगाई जा सकती हैं हमारे समय के अन्य कद्दावर कथाकार नागर, यशपाल, राही मासूम रज़ा, सुरेन्द्र वर्मा, कृष्ण बलदेव वैद, विनोद कुमार शुक्ल, स्वदेश दीपक अपनी भाषाई अदायगी के लिए ही जाने जाते हैं।

आखिरकार *मुझे चांद चाहिए* --अनेक प्रेम कथाओं के होते हुए भी जब सामने आया तो अचानक भाषा किस्सागोई की नाक की कील की तरह दमकने लगी वह भाषा हाथोहाथ ली गयी *नौकर की कमीज* या *दीवार में एक खिड़की रहती थी*- --आया तो वह विनोदकुमार शुक्ल की अपनी भाषाई लीक पर चल कर आया वे भाषा की नई तहजीब के रचनाकार हैं, भाषा का यही अनूठापन उनके काव्य में भी पहचाना जाता है सोबती इसी तरह अपनी बनाई भाषा की सरणि पर चलती दीखती हैं जो उन्होंने अपने पैदाइश की जगह, अपने प्रवासों, अपनी आवाहाजियों व अपनी अलग तरह की सोहबतों से हासिल किया है।

उनकी किस्सागोई के बारे में श्लीलता अश्लीलता की बहसें होती रही हैं किन्तु भाषा के शील का उन्होंने हमेशा ध्यान रखा. भाषा को उन्होंने किसी नैतिक किस्म के व्याकरण से संचालित नही होने दिया। वे भाषा की बहुवस्तुस्पर्शिता की रचनाकार हैं जहां जैसी भाषा की दरकार है वैसा प्रयोग किया है उन्होंने *जिन्दगीनामा* की जो भाषा है वह *दिलोदानिश* की नही है वहां एक परिष्कृत भाषाई प्रभामंडल मिलेगा संस्मरणों में क्योंकि अधिकांशत: नैरेटर वे खुद होती हैं तो उनका भाषाई संस्कार जिसमें उर्दू हिंदी संस्कृत की घुलत मिलत है, उसका प्रभाव बोलता है 'मित्रो मरजानी' की भाषा अलग है वह मित्रों के अंदरूनी संस्कारों के पिघलने के साथ पिघलती और बहती है वे सरलता व सादगी को भाषा का एक गुण तो मानती हैं पर एकमात्र गुण नहीं *जिन्दगीनामा* में जो भाषाई वितान है, फैलाव है व पंजाबी परिवेश और उसके सामाजिक लोकाचार की उपज है यह किसी एक गांव की कहानी नही है, जैसे *रागदरबारी* का देहात कोई एक निश्चित जगह की भौगोलिक इकाई नही है, वह भारतीय देहात और कस्बाई यथार्थ का एक नमूना है जो भाषाई विभिन्नताओं के बावजूद एक सा है।

वे कहीं कहती भी हैं कि *जिन्दगीनामा* जैसा पाठ दूसरे हाथ के माल से नहीं बुना जा सकता था जैसे हम कहें कि *रागदरबारी* केवल श्रीलाल शुक्ल जी लिख सकते थे या *आधा गाँव* केवल राही मासूम रजा और *मुझे चाँद चाहिए* केवल सुरेन्द्र वर्मा केवल यह अद्वितीयता ही लेखक का उसका अपना शैलीकार बनाती है वह आसानी से किसी की लेखन शैली में तिरोहित और समामेलित नहीं हो सकता यह भाषाई अद्वितीयता तो सोबती के यहां है ही।

निष्कर्ष

कृष्णा सोबती की भाषा शैली सहज, सरल, और व्यवहारिक है वे प्रायप्रसंगानुकूल और पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करती है। प्रस्तुत संस्मरण 'मियाँनसीरुद्दीन' में उन्होंने उर्दू मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है रसखान ने ब्रज भाषा में काव्य-रचना की। इनकी भाषा मधुर एवं सरस है। उसका स्वाभाविक प्रवाह ही इनके काव्य को आकर्षक बना देता है। इन्होंने कहीं-कहीं पर यमक तथा अनुप्रास आदि अलङ्कारों का प्रयोग किया है जिससे भाषा-सौन्दर्य के साथ भाव-सौन्दर्य की भी वृद्धि हुई है।

सन्दर्भ

1. हम हशमत भाग – 1 कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन), दिल्ली(2007)
2. हम हशमत भाग – 2 कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन), दिल्ली,(2008)
   हम हशमत भाग – 3 कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन), दिल्ली,(2009)
3. हम हशमत – 4 कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन), दिल्ली, (2010)
4. कृष्णा सोबती की रचनाओं में सृजन परिवेश - सपना तिवारी